

क्षयं नीत्वा सुधीर्ध्यानाद् घातिकर्मचतुष्टयम्। केवलज्ञानमुत्पाद्य संजातो भुवनार्चितः ॥१३॥
महापापप्रकर्तापि प्राणी श्रीजैनधर्मतः। भवेत्त्रिलोक्यसंपूज्यो धर्मात्किं भो परं शुभम् ॥१४॥
स श्रीकेवललोचनोत्तिचतुरो भव्यौघनिस्तारको देवेन्द्रादिसमर्चितो हितकरो धीरो मृगादिध्वजः।
नाना शर्मयशःप्रबोधजनकैर्भक्त्या समाराधितो। दद्यान्मे भवतां च निर्वृतिपदं नित्यं महामङ्गलम् ॥१५॥
इति कथाकोशे मृगध्वजमुनेराख्यानं समाप्तम्।

५६. परशुरामस्य कथा

नमस्कृत्य जिनाधीशं संसाराम्भोधितारणम्। श्वेतरामस्य संवत्स्रि चरित्रं चित्रकारणम् ॥१॥
अयोध्यापत्तने राजा कार्तवीर्योत्तिमूढधीः। पद्मावती महाराज्ञी तस्यासीत्प्राणवल्लभा ॥२॥
अटव्यां तापसावासपल्लिकायां च तापसः। रेणुका कामिनीनाथस्तत्रास्ते यमदग्निवाक् ॥३॥
तयोः पुत्रौ मनःप्रीतौ श्वेतरामस्तु पूर्वकः। महेन्द्ररामनामा च द्वितीयः प्राणवल्लभः ॥४॥
एकदा रेणुकाभ्राता वरदत्तो मुनीश्वरः। तत्पल्लिकासमीपेऽसौ वृक्षमूले सुखस्थितः ॥५॥

का नाश किया और केवलज्ञान प्राप्त कर संसार द्वारा वे पूज्य हुए। सच है, जिनधर्म का प्रभाव ही कुछ ऐसा अचिन्त्य है जो महापापी से पापी भी उसे धारण कर त्रिलोक-पूज्य हो जाता है और ठीक भी है, धर्म से और उत्तम है ही क्या? वे मृगध्वज मुनि मुझे और आप भव्य-जनों को महा मंगलमय मोक्ष लक्ष्मी दें, जो भव्य-जनों का उद्धार करने वाले हैं, केवलज्ञानरूपी अपूर्व नेत्र के धारक हैं, देवों, विद्याधरों और बड़े-बड़े राजाओं-महाराजाओं से पूज्य हैं, संसार का हित करने वाले हैं, बड़े धीर हैं और अनेक प्रकार का उत्तम से उत्तम सुख देने वाले हैं ॥१०-१५॥

५६. परशुराम की कथा

संसार-समुद्र से पार करने वाले जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर परशुराम का चरित्र लिखा जाता है जिसे सुनकर आश्चर्य होता है ॥१॥

अयोध्या का राजा कार्तवीर्य अत्यन्त मूर्ख था। उसकी रानी का नाम पद्मावती था। अयोध्या के जंगल में यमदग्नि नाम के एक तपस्वी का आश्रम था। इस तपस्वी की स्त्री का नाम रेणुका था। इसके दो लड़के थे। इसमें एक का नाम श्वेतराम था और दूसरे का महेन्द्रराम। एक दिन की बात है कि रेणुका के भाई वरदत्त मुनि उस ओर आ निकले। वे एक वृक्ष के नीचे ठहरे। उन्हें देखकर रेणुका बड़े प्रेम से उनसे मिलने को आई और उनके हाथ जोड़कर वहीं बैठ गई। बुद्धिमान् वरदत्त मुनि ने उससे कहा-बहिन, मैं तुझे कुछ धर्म का उपदेश सुनाता हूँ। तू उसे जरा सावधानी से सुन! देख, सब जीव सुख को चाहते हैं, पर सच्चे सुख के प्राप्त करने की कोई बिरला ही खोज करता है और इसीलिए प्रायः लोग दुःखी देखे जाते हैं। सच्चे सुख का कारण पवित्र सम्यग्दर्शन का ग्रहण करना है। जो पुरुष सम्यक्त्व प्राप्त कर लेते हैं, वे दुर्गतिओं में फिर नहीं भटकते। संसार का भ्रमण भी

तत्र तं रेणुका वीक्ष्य भ्रातरं मुनिसत्तमम्। महाप्रीत्या प्रणम्योच्चैः पादमूले च संस्थिता ॥६॥
 तेनोक्तं वरदत्ताख्यमुनीन्द्रेण महाधिया। शृणु त्वं भो भगिन्यत्र सावधानेन चेतसा ॥७॥
 सम्यक्त्वं त्रिगजत्पूतं दुर्गतिच्छेदकारणम्। स्वर्गमोक्षतरोर्बीजं भवभ्रान्तिनिवारणम् ॥८॥
 तच्च देवो जिनाधीशो रागद्वेषादिवर्जितः। केवलज्ञानसाम्राज्यः सुरासुरनमस्कृतः ॥९॥
 तद्भाषितो भवेद्धर्मो लोकद्वयसुखप्रदः। इन्द्रनागेन्द्रचन्द्राद्यैः पूजितो दशधा मुदा ॥१०॥
 उत्तमादिक्षमादिस्तु प्रसिद्धो भुवनत्रये। भवेद्बाले गुरुश्चापि शीलसंयमतत्परः ॥११॥
 ज्ञानध्यानरतो नित्यं भार्यादिग्रन्थवर्जितः। इत्येतच्छर्मदं विद्धि सम्यक्त्वं मुग्धमानसे ॥१२॥
 पात्रदानं गुणाधानं जिनार्चा शर्मदायिनी। शीलपर्वोपवासादिधर्मोयं गृहिणां शुभः ॥१३॥
 इत्यादिकं समाकर्ण्य रेणुका बान्धवोदितम्। धर्मं श्रीमज्जिनेन्द्राणां सन्तुष्टा मानसे तदा ॥१४॥
 सम्यक्त्वरत्नमादाय सा सती भक्तिस्ताराम्। स्वात्मनो मण्डनं चक्रे भव्यानां तद्विभूषणम् ॥१५॥
 ततो धर्मानुरागेण तस्यै श्रीवरदत्तवाक्। परश्वाख्यां महाविद्यां भगिन्यै मुनिसत्तमः ॥१६॥
 कामधेनुसुविद्यां च दत्त्वा शर्मप्रदायिनीम्। स्वस्थानं प्राप्तवान्धीरो जैनतत्त्वविदाम्बरः ॥१७॥
 सम्यक्त्वशालिनी सा च रेणुका स्वगृहे सुखम्। संस्थिता जिनपादाब्जभृङ्गी सद्धर्मवत्सला ॥१८॥

उनका कम हो जाता है। उनमें कितने तो उसी भव से मोक्ष चले जाते हैं। सम्यक्त्व का साधारण स्वरूप यह है कि सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्र पर विश्वास लाना। सच्चे देव वे हैं, जो भूख और प्यास, राग और द्वेष, क्रोध और लोभ, मान और माया आदि अठारह दोषों से रहित हों, जिनका ज्ञान इतना बढ़ा-चढ़ा हो कि उससे संसार का कोई पदार्थ अंजाना न रह गया हो, जिन्हें स्वर्ग के देव, विद्याधर, चक्रवर्ती और बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी पूजते हों और जिनका उपदेश किया पवित्र धर्म, इस लोक और परलोक में सुख का देने वाला हो तथा जिस पवित्र धर्म की इन्द्रादि देव भी पूजा-भक्ति कर अपना जीवन कृतार्थ समझते हों। धर्म का स्वरूप उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव आदि दशलक्षणों द्वारा प्रायः प्रसिद्ध है और सच्चे गुरु वे कहलाते हैं, जो शील और संयम के पालने वाले हों, ज्ञान और ध्यान का साधन ही जिनके जीवन का खास उद्देश्य हो और जिनके पास परिग्रह रत्तीभर भी न हो। इन बातों पर विश्वास करने को सम्यक्त्व कहते हैं। इसके सिवा गृहस्थों के लिए पात्रदान करना, भगवान् की पूजा करना, अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत धारण करना, पर्वों में उपवास वगैरह करना आदि बातें भी आवश्यक हैं। यह गृहस्थ-धर्म कहलाता है। तू इसे धारण कर। इससे तुझे सुख प्राप्त होगा। भाई के द्वारा धर्म का उपदेश सुन रेणुका बहुत प्रसन्न हुई। उसने बड़ी श्रद्धा-भक्ति के साथ सम्यक्त्व-रत्न द्वारा अपनी आत्मा को विभूषित किया और सच भी है, यही सम्यक्त्व तो भव्यजनों का भूषण है। रेणुका का धर्म-प्रेम देखकर वरदत्त मुनि ने उसे एक 'परशु' और दूसरी 'कामधेनु' ऐसी दो महाविद्याएँ दीं, जो कि नाना प्रकार का सुख देने वाली हैं। रेणुका को विद्या देकर जैनतत्त्व के परम विद्वान् वरदत्तमुनि विहार कर गए। इधर सम्यक्त्वशालिनी रेणुका घर आकर सुख से रहने लगी। रेणुका को धर्म पर अब खूब प्रेम हो गया। वह भगवान् की बड़ी भक्त हो गई ॥२-१८॥

एकदा कार्तवीर्योसौ राजा तत्र वने घने। गजस्य बन्धनार्थं च समायातस्तदा मुदा ॥१९॥
 कामधेनुमहाविद्या-प्रभावेन मनोहरम्। कारितः षड्रसोपेतं भोजनं यमदग्निना ॥२०॥
 स पापी कार्तवीर्योऽपि संभुक्त्वा लोभपूरितः। संग्रामे तापसं हत्वा कुधीस्तं यमदग्निना ॥२१॥
 कामधेनुं समादाय निर्गतस्तद्वनाज्जवात्। पोषितो दुर्जनः प्राणी सर्पवत्प्राणनाशकः ॥२२॥
 तदा तौ रेणुकापुत्रौ गृहीत्वा समिधादिकम्। समागतौ गृहं मातुर्ज्ञात्वा तां कष्टवार्त्तिकाम् ॥२३॥
 श्वेतरामस्ततो ज्येष्ठः पुत्रोऽसौ सुभटाग्रणीः। रेणुकायाः समादाय तां विद्यां परशुप्रथाम् ॥२४॥
 गत्वा महेन्द्ररामेण संयुतः कौशलां पुरीम्। कार्तवीर्यं सुसंग्रामे मारयामास भूपतिम् ॥२५॥
 मृत्वासौ निजपापेन कार्तवीर्यो नृपः कुधीः। सम्प्राप्तो नरकं घोरं पापिनामीदृशी गतिः ॥२६॥
 धिक्तृष्णां-पापिनीं जन्तोर्महादुःखप्रदायिनीम्। यत्रासक्तो जनोऽन्यायं कृत्वा कष्टं प्रयात्यलम् ॥२७॥
 अन्यायेन नरेन्द्राद्याः क्षयं गच्छन्ति किं परे। यद्वायुना द्विपा यान्ति तत्र किं शलभादयः ॥२८॥
 तदायोध्यापुरे सोऽपि श्वेतरामः स्वविद्यया। ख्यातः परशुरामेति संजातः सुमहीपतिः ॥२९॥

एक दिन राजा कार्तवीर्य हाथी पकड़ने को इसी वन की ओर आ निकला। घूमता हुआ वह रेणुका के आश्रम में आ गया। यमदग्नि तापस ने उसका अच्छा आदर-सत्कार किया और उसे अपने यहीं जिमाया। भोजन कामधेनु नाम की विद्या की सहायता से बहुत उत्तम तैयार किया गया था। राजा भोजन कर बहुत ही प्रसन्न हुआ और क्यों न होता? क्योंकि सारी जिन्दगी में उसे कभी ऐसा भोजन खाने को ही न मिला था। उस कामधेनु को देखकर इस पापी राजा के मन में पाप आया। यह कृतघ्न तब उस बेचारे तापसी को जान से मारकर गौ को ले गया। सच है, दुर्जनों का स्वभाव ही ऐसा होता है कि जो उनका उपकार करते हैं, वे दूध पिलाये सर्प की तरह अपने उन उपकारक की ही जान के लेने वाले हो उठते हैं ॥१९-२२॥

राजा के जाने के थोड़ी देर बाद ही रेणुका के दोनों लड़के जंगल से लकड़ियाँ वगैरह लेकर आ गए। माता को रोती हुई देखकर उन्होंने उसका कारण पूछा। रेणुका ने सब हाल उनसे कह दिया। माता की दुःख भरी बातें सुनकर श्वेतराम के क्रोध का ठिकाना न रहा। वह कार्तवीर्य से अपने पिता का बदला लेने के लिए उसी समय माता से 'परशु' नाम की विद्या को लेकर अपने छोटे भाई को साथ लिए चल पड़ा। राजा के नगर में पहुँच कर उसने कार्तवीर्य को युद्ध के लिए ललकारा। यद्यपि एक ओर कार्तवीर्य की प्रचण्ड सेना थी और दूसरी ओर सिर्फ ये दो ही भाई थे; पर तब भी परशु विद्या के प्रभाव से इन दोनों भाइयों ने कार्तवीर्य की सारी सेना को छिन्न-भिन्न कर दिया और अन्त में कार्तवीर्य को मारकर अपने पिता का बदला लिया। मरकर पाप के फल से कार्तवीर्य नरक गया। सो ठीक ही है, पापियों की ऐसी गति होती ही है। उस तृष्णा को धिक्कार है जिसके वश हो लोग न्याय-अन्याय को कुछ नहीं देखते और फिर अनेक कष्टों को सहते हैं। ऐसे ही अन्यायों द्वारा तो पहले भी अनेक राजाओं-महाराजाओं का नाश हुआ है। और ठीक भी है जिस वायु से बड़े-बड़े

भवति जगति शूरः पण्डितो दिव्यलक्ष्मीपतिरिह सुखयुक्तः पुण्यपण्येन जीवः।
इति मनसि विचारं चारु कृत्वा सुभवाः कुरुत जिनमतोक्तं सारपुण्यं सुखाय ॥३०॥
इति कथाकोशे परशुरामस्य कथा समाप्ता।

५७. सुकुमालमुनेः कथा

यन्नामस्मृतिमात्रेण प्राप्यते सारसम्पदा। तं प्रणम्य जिनं वक्ष्ये सुकुमालकथां मुदा ॥१॥
कौशाम्बीनगरे ख्याते संजातोऽतिबलो नृपः। पुरोहितोऽभवत्तस्य सोमशर्मा विचक्षणः ॥२॥
काश्यपी कामिनी तस्यां काश्यप्यां संबभूवतुः। अग्निभूतिस्तथा वायुभूतिनामा सुतोपि च ॥३॥
तौ द्वौ पुत्रौ प्रमादेन शास्त्राभ्यासं न चक्रतुः। विना पुण्येन जन्तूनां मुखाब्जे नैव भारती ॥४॥
सोमशर्मण्यतस्तस्मिन्कालव्याघ्रेन भक्षिते। पुरोहितपदं तस्य गृहीतं गोत्रिभिस्तदा ॥५॥
मूर्खत्वान्न तयोर्दत्तं भूभुजातिबलेन तत्। क्व भवेन्मूढजन्तूनां दानमानादिकक्रिया ॥६॥
ततस्तौ मानभङ्गेन गत्वा राजगृहं पुरम्। पितृव्यं सूर्यमित्राख्यं नत्वा वृत्तान्तमूचतुः ॥७॥
कैश्चिद्विनैस्ततस्तेन सूर्यमित्रेण धीमता। नाना शास्त्राणि तावुच्चैः पाठितौ पोषितावपि ॥८॥

हाथी तक मर जाते हैं तब उसके सामने बेचारे कीट-पतंगादि छोटे-छोटे जीव तो ठहर कैसे सकते हैं। श्वेतराम ने कार्तवीर्य को परशु विद्या से मारा था, इसलिए फिर अयोध्या में वह 'परशुराम' इस नाम से प्रसिद्ध हुआ ॥२३-२९॥

संसार में जो शूरवीर, विद्वान्, सुखी, धनी हुए देखे जाते हैं वह पुण्य की महिमा है। इसलिए जो सुखी, विद्वान्, धनवान्, वीर आदि बनना चाहते हैं, उन्हें जिन भगवान् का उपदेश किया पुण्य-मार्ग ग्रहण करना चाहिए ॥३०॥

५७. सुकुमाल मुनि की कथा

जिनके नाम मात्र का ध्यान करने से हर प्रकार की धन-सम्पत्ति प्राप्त हो सकती है, उन परम पवित्र जिन भगवान् को नमस्कार कर सुकुमाल मुनि की कथा लिखी जाती है ॥१॥

अतिबल कौशाम्बी के जब राजा थे, तब का यह आख्यान है। यहाँ एक सोमशर्मा पुरोहित रहता था, इसकी स्त्री का नाम काश्यपी था। इसके अग्निभूत और वायुभूति नामक दो लड़के हुए। माँ-बाप के अधिक लाड़ले होने से वे कुछ भी पढ़-लिख न सके और सच है पुण्य के बिना किसी को विद्या आती भी तो नहीं। काल की विचित्र गति से सोमशर्मा की असमय में ही मौत हो गई ये दोनों भाई तब निरे मूर्ख थे। इन्हें मूर्ख देखकर अतिबल ने उनके पिता का पुरोहित पद, जो उन्हें मिलता, किसी और को दे दिया। यह ठीक है कि मूर्खों का कहीं आदर-सत्कार नहीं होता। अपना अपमान हुआ देखकर उन दोनों भाइयों को बड़ा दुःख हुआ। तब उनकी कुछ अकल ठिकाने आई तब उन्हें कुछ लिखने-पढ़ने की सूझी। वे राजगृह में अपने काका सूर्यमित्र के पास गए और अपना